प्रथम अध्याय
उपन्यास की पृष्ठभूमि एवं तत्वों का अध्ययन

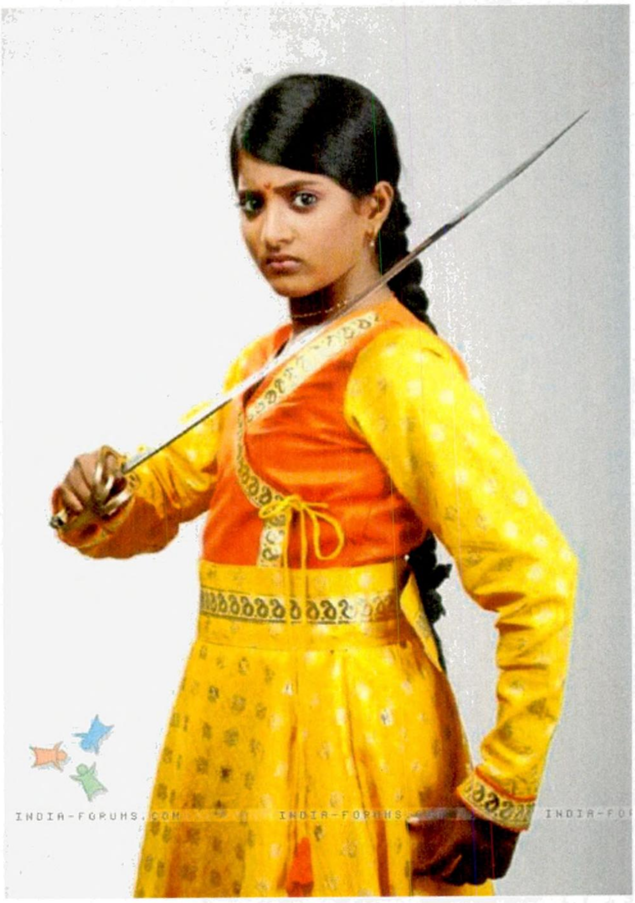

बालिका मनू–'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई'

प्रथम अध्याय : उपन्यास की पृष्ठभूमि एवं तत्वों का अध्ययन

साहित्यिक विधाओं में सर्वाधिक विस्तृत और विशद् विधा उपन्यास है। वह मानव मन को गहनता और विस्तार के साथ चित्रित करने का माध्यम है। साहित्य मानव जीवन को रूपायित करने के लिए उपन्यास का रूप धारण करता है। साहित्य की समृद्धिशाली विधा के रूप में उपन्यास ने अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है। उपन्यास का उद्देश्य मानव का स्वानुभूत चित्रण करना है। वह जीवन के यथार्थ–क्षेत्र को प्रस्तुत करता है।

1. उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति, प्रयोग एवं अर्थ :

'उपन्यास' शब्द संस्कृत के 'अस्' धातु से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है रखना। इसमें 'उप' और 'नि' उपसर्ग हैं तथा 'धञ' प्रत्यय का प्रयोग है। (उप+नि+अस्+धञ = उपन्यास) इसका अर्थ उपस्थापन है। हिन्दी साहित्यकोश में उपन्यास शब्द को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है – ''उपन्यास शब्द, उप = समीप तथा न्यास = थाती के योग से बना है, जिसका अर्थ हुआ (मनुष्य के) निकट रखी हुई वस्तु, अर्थात् वह वस्तु या कृति जिसको पढ़कर ऐसा लगे कि यह हमारी ही है, इसमें हमारे ही जीवन का प्रतिबिम्ब है, इसमें हमारी ही कथा, हमारी ही भाषा में कही गयी है।''★ *(फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन, प्रो. अशोक वामनराव धुले धुले, अक्षय प्रकाशन, पृ. 9.)*

उपन्यास शब्द की व्युत्पत्ति के विषय में, उपरोक्त विचार के आधार पर कहा जा सकता है कि उपन्यास **वह कृति है जिसमें एक साहित्यकार अपने जीवनानुभव को साकार करता है, जीवन को प्रस्तुत करता है।**

उपन्यास शब्द का प्रयोग संस्कृत ग्रंथों में भी प्राप्त है। 'उपन्यासस्तु प्रसादनम्' अर्थात् किसी अर्थ को युक्तिपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने वाला तथा प्रसन्नता प्रधान करने वाला। संस्कृत साहित्यशास्त्र में इस शब्द का प्रयोग स्वतंत्र विधा के रूप में नहीं, अपितु नाटक की प्रतिमुख संधि के उपभेद के रूप में किया गया है। किन्तु आज जिस आधुनिक साहित्यिक विधा के अर्थ में इसका प्रयोग किया जाता है वह संस्कृत ग्रंथों में उसी रूप में परिलक्षित नहीं होता। उनमें उपन्यास शब्द के अर्थ इस प्रकार है – ''नाटक की प्रतिमुख संधि का एक भेद, प्रतिमुख संधि का द्वादश अंग, नियोजन, कथन, विन्यास, स्थापना, ज्ञापन, संदर्भ, उदाहरण, वाङमुख (वागारम्भ कथन)''★ *(फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन, प्रो. अशोक वामनराव धुले धुले, अक्षय प्रकाशन, पृ. 10.)*

''संस्कृत–अँग्रेज़ी शब्दकोश'' में उपन्यास शब्द के अर्थ निम्नानुसार दिए हैं – "Placing near to (समीप रखना), Juxtaposition (निकट रखना), Deposit (धरोहर), Pledge (वचन), Statement (वक्तव्य), Suggestion (सुझाव), Proposal (प्रस्ताव) ।''★★ *(Sanskrit-English Dictionary Gode Karne, Page 452)*

डॉ. जगदीश प्रसाद का कथन है – ''उपन्यास वह साहित्य विधा है – जिसमें मानव जीवन के विविध पक्षों का कल्पनापरक यथार्थ महाकाव्य कहा जा सकता है – जिसमें मनुष्येतर पदार्थों का भी वर्णन मनुष्य के संदर्भ में होता है और जो सत्य, सुंदर तथा लेखक की अन्तर्दृष्टि की गंभीरता से समन्वित होता है''★★★ *(हिन्दी साहित्य का निबंधात्मक इतिहास, आचार्य उमेश शास्त्री, देवनागर प्रकाशन, पृ. 66)*

कुछ विद्वान उपन्यास शब्द को परम्परागत रूप में स्वीकार करते हैं तो कुछ इसे अँग्रेज़ी शब्द नॉवल (NOVEL) के प्रति शब्द के रूप में प्रादुर्भूत मानते हैं तथा उपन्यास विधा को पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव के कारण ही निसृत मानते हैं।

हिन्दी साहित्य कोश के अनुसार, ''आधुनिक युग में जिस साहित्यिक विशेष के लिए इस शब्द का प्रयोग किया जाता है, उसकी प्रकृति को स्पष्ट करने में यह शब्द सर्वथा समर्थ है।''★ *(हिन्दी साहित्य कोश, संपादक डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, भाग–1, पृ. 121)*

सर मोनियर विलियम्स ने अपने संस्कृत अँग्रेज़ी शब्द–कोश में 'उपन्यास' के कुछ अर्थ इस प्रकार दिए हैं। – उल्लेख (Mention), अभिकथन (Statement), सम्मति (Suggestion), उद्धरण (Quotation), संदर्भ (Reference)। डॉ. मैकडोनल ने अपने शब्द कोश में उपन्यास के अर्थ इस प्रकार दिए हैं – विज्ञप्ति (intimation), अभिकथन (Statement), उद्घोषण (Declaration), वादविवाद (Discussion).

2. 'उपन्यास' की परिभाषाएँ, महत्व एवं उपयोगिता :

जीवन और जगत् की सूक्ष्म और व्यापक अभिव्यक्ति रूप होने के कारण उपन्यास को परिभाषित करके बाँधना एक कठिन कार्य है। इसकी जो भी परिभाषाएँ दी गई हैं वे परिभाषाकार की दृष्टिकोण लेते हुए उपन्यास की संपूर्णता के सभी कोणों को नहीं छूती। उनकी दृष्टि में इसका जितना और जैसा स्वरूप दृष्टिगोचर हुआ–वही उन्होंने व्यक्त किया है। वस्तुतः किसी भी साहित्यांग की नियमनिष्ठ परिभाषा देना कठिन है और उपन्यास को परिभाषाबद्ध करना तो और भी अधिक कठिन है, क्योंकि वह सर्वाधिक रूपांतरणीय है।

2.1. पाश्चात्य विद्वानों की परिभाषाएँ :

''मानव वाणी में विचारों का गद्यमय अनुवाद उपन्यास है जो पाठकों के ज्ञान की अभिवृद्धि भी करता है।''★★ *(व्हाट इज ए नॉवेल एण्ड व्हाट इज इट गुड्ड फॉर, इराबुल्फर्ट, राइट्र्स बुक कंपनी, लंदन, पृ. 8)* — **इराबुल्फर्ट**

"उपन्यास एक ऐसा गद्य गाथा है जिसका आधार वास्तविक जगत होता है और जो एक प्रकार की सीमितता और पूर्णता से युक्त होता है।"★ *(एन इंट्रोडक्शन टू दि इंगलिश नॉवेल, (1951 ई.) लंदन, आर्नोल्ड केटिल, पृ. 28)*

— आर्नोल्ड केटिल

"काव्य तथा इतिहास की सीमा से घिरी हुई पचास हज़ार शब्दों से अधिक बड़ी गद्य–रचना उपन्यास है।"★★ *(एस्पैक्ट ऑफ नॉवल (1927 ई.), ई.एम. फास्टर, एडवर्ड आर्नल्ड एंड कंपनी, लंदन, पृ. 13–14)* **— ई.एम. फास्टर**

"नॉवेल एक श्रृंखलाबद्ध कहानी है। यह कहानी वास्तव में ऐतिहासिक रूप से सत्य नहीं है, किन्तु वास्तविक जैसी हो सकती है।"★★★ *(इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका, 19वाँ भाग, अनूदित, 1961 ई. पृ. 833)*

"उपन्यास विशद लम्बाई लिए हुए वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाली कथावस्तु या चरित्र–कथा है।"★★★★ *(न्यू इंटरनेशनल डिक्शनरी ऑफ इंगलिश लैंग्वेज, बेब्स्टर, पृ. 1670)* **— बेब्स्टर**

2.2. अँग्रेज़ी परिभाषाएँ :

"The most protean of literary forms the novel is the least amenable to formal definitions."★★★★★ *(Dictionary of World Literature Terms (1962) J.T. Shipley, Little field Adems Peterson, Pg. 215)* **— जोसफ टी सिफ्ले**

"A fictious prose narrative or tale presenting a picture of real life, specially of the emotional crisis in the life history of the man and women portraryed"★★★★★★ *(हिन्दी उपन्यासों में नायिका की परिकल्पना, डॉ. सुरेश सिन्हा, अशोक प्रकाशन, पृ. 40 एवं 105)* **— चेम्बेर्स डिक्शनरी**

2.3. भारतीय विद्वानों की परिभाषाएँ :

''उपन्यास विराट चित्रफलक पर यथार्थ परिवेश में मानव जीवन की अभिव्यक्ति है। वह मनुष्य की आंतरिकता का अन्वेषण है और मानवीयता की प्रतिष्ठा तथा मानव मूल्य की मर्यादा निश्चित करता है। वह मनुष्य की अन्तर्निहित सामर्थ्य की पहिचान है। वह मानव जीवन के जटिल परिवेश के सूक्ष्म से सूक्ष्म सूत्रों को स्पष्ट करता है तथा विभिन्न सामाजिक संदर्भों को नए आयाम देता है।''★ *(हिन्दी उपन्यास : डॉ. सुरेश सिन्हा, लोकभारती प्रकाशन, पृ. 381)*

– डॉ. सुरेश सिन्हा

''उपन्यास मानव जीवन की समग्रता तथा उसके परिवेश की संपूर्णता को भाषाबद्ध करके प्रकाशित करने का प्रयास करता है। ... उपन्यास उसी ईश्वरीय सृजन का पुनः सृजन है जो प्रत्यक्ष है, वह जीवन है और जो अप्रत्यक्ष है, वह जीवन का अभिन्न अंग है। सत्य की स्थिति दोनों में है क्योंकि सत्य का महत्व सापेक्षिक होता है। उपन्यास केवल जीवन के प्रत्यक्ष को लेकर नहीं लिखा जाता, जो अप्रत्यक्ष तथा नहीं लिखने वाला सत्य है उसे लेकर भी लिखा जाता है।''★★ *(हिन्दी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन (1972 ई.), डॉ. रमेश तिवारी, रचना प्रकाशन, पृ. 57)* **– डॉ. रमेश तिवारी**

''उपन्यास आधुनिक युग की देन है। नये गद्य के प्रचार के साथ–साथ उपन्यास का प्रचार हुआ है। आधुनिक उपन्यास केवल कथामात्र नहीं है और पुरानी कथाओं और आख्यायिकाओं की भाँति कथासूत्र का बहाना लेकर उपनामों, रूपकों, दीपकों और श्लेषों की छटा और सरस पदों में गुम्फित पदावली की छटा दिखाने का कौशल भी नहीं है। यह आधुनिक वैयक्तिकतावादी दृष्टिकोण का परिणाम है।''★★★ *(प्राचीन ऐतिहासिक उपन्यास : इतिहास और कला, डॉ. सुषमा त्यागी, अनुराधा प्रकाशन, पृ. 9)* **– डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी**

''बाबू गुलाबराय ने उपन्यास को कार्यकारण श्रृंखला में बँधा हुआ एक गद्य कथानक माना है, जिसमें अपेक्षाकृत अधिक विस्तार तथा पेंचीदगी के साथ–साथ वास्तविक जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाले व्यक्तियों से संबंधित वास्तविक या काल्पनिक घटनाओं द्वारा मानव–जीवन के सत्य का रसात्मक रूप से उद्घाटन किया जाता है।★ *(काव्य के रूप (1964 ई.) बाबू गुलाबराय, आत्माराम एण्ड सन्स, पृ. 170)*

– डॉ. गुलाब राय

2.4. उपर्युक्त परिभाषाओं को दृष्टि में रखते हुए उपन्यास की निम्नलिखित विशेषताएँ अंकित की जा सकती हैं :–

- ❖ उपन्यास में मानव–जीवन से संबंधित संवेदनापूर्ण कथावस्तु होती है।
- ❖ उपन्यास में सम्पूर्ण मानव–जीवन की व्यापक झाँकी प्रस्तुत करने का कलापूर्ण प्रयास किया जाता है।
- ❖ उपन्यास एक प्रकार से जीवन का दर्पण होता है, जिसमें उपन्यासकार के व्यक्तित्व का भी प्रतिबिम्ब परोक्ष रूप से होता है।
- ❖ उपन्यास यथार्थ तथा कल्पना दोनों के आनुपात से निर्मित होता है।
- ❖ उपन्यास का माध्यम गद्य है – यह उसे काव्य से पृथक करता है।
- ❖ उपन्यास में कल्पित कथा होती है – यह तत्व उसे इतिहास, जीवनी, आत्मकथा, पत्रकारिता आदि से पृथक करता है तथा उसकी रोचकता का मुख्य आधार है।
- ❖ उपन्यास अपेक्षतया बड़े आकार का होता है – यह उसे कहानी से पृथक करता है।

- उपन्यास का दृष्टिकोण यथार्थोन्मुखी है – यह उसे रोमांस से पृथक करता है और उस काव्य से भी जो इसकी उपेक्षा भी कर सकता है। उपन्यास का उदय भी उसकी निरन्तर यथार्थोन्मुखता – काव्य के अपेक्षतया स्थायी जीवन के विपरीत नित्य परिवर्तित जीवन की अंकन–क्षमता को ध्वनित करता है। परिवर्तनशील जीवन के यथार्थ को पकड़ने के लिए नए–नए शिल्प का आश्रय भी इसीका परिणाम है।

- उपन्यास में पात्रों का चरित्रांकन अनिवार्य है – चरित्रांकन करनेवाली अन्य विधाओं से उपन्यास में इसकी सर्वाधिक गुंजाइश है। अतएव इसका पृथक उल्लेख आवश्यक है।

- उपन्यास में वर्णन अनिवार्य है – उसके अभाव में वह नाटक हो जाता है।

- उपन्यास जैसे सर्वाधिक निर्बन्ध काव्यरूप में उपन्यासकार की एकल दृष्टि (single vision) अपरिहार्य है – यही उपन्यास के समस्त संयोजन की मूल शक्ति है और यह दृष्टि उसकी अपनी होती है – उसके व्यक्तित्व की परिचायक है।

- उपन्यास में किसी न किसी प्रकार की रोचकता भी अनिवार्य है क्योंकि पाठकों के रंजन के बिना और सब कुछ व्यर्थ हो सकता है।

इसके अतिरिक्त उपन्यास का पृथक वैशिष्ट्य इसमें भी है कि वह सभी साहित्यांगों से सर्वाधिक बहुग्राही एवं सर्वाधिक लचीली विधा है और उनमें से किसी का आश्रय लेकर भी अपना अस्तित्व बनाए रख सकती है। उसमें सबका विलय हो सकता है किन्तु वह किसी में नहीं समा सकती। इन सब विशेषताओं को मिलाकर कहा जा सकता है कि उपन्यास वैयक्तिक दृष्टि से वास्तवाभासी कल्पित कथा–पात्रों को लेकर जीवन के एकांगी या बहुरंगी गतिशील यथार्थ को

अंकित करने में, नित्य नवल रूप धारण करने में समर्थ, अपेक्षतया बड़े आकार का, रोचक वर्णनात्मक गद्य रूप है।

2.5. उपन्यास का महत्व :

उपन्यास जीवन का चित्रण करता है। यथा "उपन्यास के अन्तर्गत मानव जीवन को पाठकों के सामने रखने में लेखक अपने व्यक्तित्व के प्रकाश में जीवन और पात्रों को एक सुनिश्चित रूप प्रदान करता है।"* *(कृष्णा सोबती के कथा साहित्य में स्त्री का स्वरूप, डॉ. अनीता, जवाहर पुस्तकालय, पृ. 11)*

उपन्यास में मानव जीवन की विस्तृत गवेषणा है। उपन्यास मानव जीवन की सम्पूर्ण प्रक्रिया को अपनी अन्तर्दृष्टि से चित्रित करता है। इसमें जीवन दृष्टि, क्रियाशीलता और शिल्प का योग होता है। उपन्यास के विशद रूप को इस प्रकार अभिव्यक्त किया जा सकता है – काव्य अपनी भावमयता और कल्पना में उलझकर संकीर्ण एवं शिथिल गति होकर रह जाता है, नाटक अपनी दृश्यमयता के कारण सीमित एवं आन्तरिक अर्थात् भाव एवं उद्देश्यगत सीमाओं के कारण जीवन के किसी एक ऊर्जामय अंश का ही उद्‌घाटन कर पाता है। उपन्यास इन तीनों विधाओं के सभी गुण स्वयं में अनुस्यूत किये हुए है और साथ ही इनकी सीमागत संकीर्णता उसमें नहीं है। इस प्रकार उपन्यास में लेखक की गहन विचारधारा ही प्रतिफलित होती है। वह मानव जीवन की सम्पूर्ण प्रक्रिया को अपनी अर्न्तदृष्टि से चित्रित करता है। उपन्यास में जीवन दृष्टि, क्रियाशीलता और शिल्प का योग होता है। मानव जीवन की यथार्थता, स्पष्टता व बौद्धिकता को उपन्यास का आधार कहा जाता है।

कथ्य और रूप की दृष्टि से उपन्यास सर्वाधिक जनतान्त्रिक साहित्यिक विधा है। जीवन का कोई अंग उसके लिए निषिद्ध नहीं है। वह इतना लचीला है कि अभिव्यंजना की प्रत्येक प्रणाली का उसमें उपयोग किया जाता है।

गीतिकाव्यों का पूंजीभूत भाव–सत्य, दुःखान्त नाटकों का चिरन्तन संघर्ष और करुणा, मुक्तक काव्य का उक्ति–वैचित्र्य और नीति–सत्य–सभी कुछ उपन्यास में समा सकता है। वह ज्ञान का पोषक होने के साथ–साथ मनुष्य के सांस्कृतिक विकास का परिचायक भी है।

उपन्यास जीवन का सबसे निकटतम साहित्यिक रूप है। उसके रूप और ध्येय जीवन के ही रूप और ध्येय हैं। भूत का स्पष्टीकरण, वर्तमान का विश्लेषण और भविष्य के निर्माण में मार्ग–दर्शन कर वह मनुष्य का सबसे बड़ा सहायक बन सकता है। उसमें जीवन के स्पन्दनों का चित्रण होता है, अतः रागात्मक तत्व उसकी आत्मा है। आज साहित्यिक विधाओं में उपन्यास को सर्वश्रेष्ठ स्वीकार किया जाता है क्योंकि वह वर्तमान युग की वास्तविकताओं, जटिलताओं, उसकी परिवर्तनशील चेतना को अभिव्यक्त करने में सर्वाधिक सक्षम है।

उपन्यास पाठक जगत की सर्वाधिक प्रिय साहित्यिक विधा है। इसकी रसात्मक शक्ति से पाठकों के प्रायः सभी वर्ग अभिभूत होते हैं। विधिवत रचे गए तथा स्फूर्ति–तत्व से युक्त उपन्यास ही मानवता की व्याख्या करने में समर्थ है। ये पाठकों की अन्तर्दृष्टि और संवेदन शक्ति को जाग्रत करते हैं, उन्हें सामाजिक विषमताओं के प्रति सतर्क कर, चारित्रिक क्षमता प्रदान करते हैं। ये एक रस, अधकचरे वास्तविक जीवन को नाटकीय व्यवस्था और पाठकों को नई सामर्थ्य एवं सांत्वना देते हैं।

अपनी इन विशेषताओं के कारण विभिन्न विद्वानों ने उपन्यास की प्रशंसा की है। ''आचार्य शुक्ल वर्तमान जगत में उपन्यासों की शक्ति का लोहा मानते हैं तो एलेन प्राइस जोन्स की मान्यता है कि उपन्यास केवल काल्पनिक परिस्थितियों से प्रभावित होने के लिए नहीं पढ़ा जाता अपितु आत्मान्वेषण के लिए पढ़ा जाता है। मराठी आलोचक सर्वटे उसकी तुलना सागर से करता है, तो हडसन उसे

सर्वाधिक सशक्त काव्य–रूप कहता है, "The Novel has largely displaced the drama, as it has displaced other vehicles for the expression of our common interest in human life, and has established itself as the principal literary form of our complex and many-sided modern world."★ *(उपन्यास : स्वरूप, संरचना तथा शिल्प, डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्त, पृ. 14)*

उपन्यास हमें अवसर प्रदान करता है कि हम मानव–जाति के विविध प्रतिनिधि वर्गों से निकट का परिचय प्राप्त करें। समकालीन उपन्यास युग का दर्पण है। वह एक ऐसा विशिष्ट दर्पण है जिसमें युग का बाह्य पक्ष ही नहीं अपितु आंतरिक स्वरूप भी प्रतिबिंबित होते हैं।

3. उपन्यास के तत्व :

हिन्दी उपन्यास विधा पाश्चात्य उपन्यास–विधा के आधार पर निर्मित है। अतः उसकी कसौटी के मापदण्ड भी पाश्चात्य उपन्यास विधा के ही स्वीकार किये जाएँ – यह उचित होगा। सामान्यतः उपन्यास के निम्नलिखित छः तत्व सर्वमान्य रूप से स्वीकृत है। 1. कथानक अथवा कथावस्तु, 2. पात्र एवं चरित्र चित्रण, 3. कथोपकथन अथवा संवाद, 4. देशकाल तथा वातावरण, 5. भाषा–शैली, 6. उद्देश्य।

उपन्यास जीवन की प्रतिकृति है, इसलिए उसका संबंध–मानव–व्यापारों, क्रियाकलापों और घटनाओं से होता है, इसी को उपन्यास की 'कथानक' कहते हैं। इन घटनाओं का विधाता–मानव उपन्यास सृष्टि का 'पात्र' कहलाता है। उपन्यास जगत में पात्रों की बातचीत को 'कथोपकथन' कहते हैं। ये जीवन की घटनायें किसी विशिष्ट समय और किसी विशिष्ट स्थान पर घटित होती है। इस समय और स्थान को ही परिस्थिति, 'वातावरण' अथवा 'देशकाल' कहते हैं। प्रत्येक उपन्यास में लेखक जाने–अनजाने जीवन और उसकी कुछ समस्याओं का उद्घाटन तथा विवेचन करता है, इसको हम उपन्यासकार द्वारा प्रस्तुत आलोचना, व्याख्या अथवा जीवन–दर्शन कह सकते हैं। इसे ही 'उद्देश्य' भी कहते हैं।

वास्तव में उपन्यास के प्रत्येक तत्व का अपना महत्व होता है। समस्त तत्व अन्य तत्वों के साधन होते हैं। यह कहना उचित होगा कि उपन्यास अपने उपकरणों की समष्टि का उत्पादन है और प्रभावोत्पादकता में सभी तत्वों का सहयोग रहता है। उपन्यास एक इकाई है, किन्तु अध्ययन की सुविधा के लिए या तत्संबंधी विवेचन के लिए उसके मूल तत्वों का निरूपण आवश्यक है।

3.1. कथावस्तु :

कथावस्तु या कथानक ही वह नींव होती है जिस पर उपन्यास का आलीशान भवन खड़ा होता है। अँग्रेज़ी में कथावस्तु को प्लाट (Plot) कहा जाता है। महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी, प्रेमाख्यान, लोककथा–ये साहित्य के कथानक रूप हैं। अतः उपन्यास के तत्वों में 'कथावस्तु' एक महत्वपूर्ण तत्व है। कथावस्तु में घटनाओं का कार्य–कारण संबंध विद्यमान रहता है। पाठक की रुचिवर्धन के लिए उपन्यासकार उसमें आदि–मध्य–अन्त का निर्वाह, घटनाओं का व्यवस्थीकरण, रहस्यात्मकता, औत्सुक्यवर्धन आदि का प्रयोग करते हुए उसके कलात्मक सौंदर्य को बढ़ाता है, जिससे उपन्यास का समस्त कार्य–व्यापार पाठक

के लिए ग्राहक बनता है। अतः यह स्पष्ट है कि कथावस्तु एक महत्वपूर्ण तत्व है। उपन्यास की सफलता का एक बड़ा अंश कथावस्तु पर ही निर्भर रहता है। उपन्यास की कथावस्तु को इतिहास, पुराण या समसामयिक बोध से ग्रहण किया जाता है। पर यह बहुत ही आवश्यक है कि उपन्यासकार जिस किसी भी क्षेत्र से कथावस्तु ग्रहण करें उसका सम्यक ज्ञान उसे हो; क्योंकि उपन्यास में जो गहराई अपेक्षित होती है, उस तक पहुँचने के लिए विषय वस्तु के सम्यक ज्ञान का होना अनिवार्य है।

3.1.1. कथावस्तु के गुण :

कथावस्तु में घटनात्मक विवरणों का एक बृहत लेखा जोखा होता है, इसलिए उसका संबंध घटना–विन्यास संबंधी अनेक विशेषताओं से होता है। इन विशेषताओं को कथावस्तु के गुण कहा जाता है। ये गुण इस प्रकार हैं। 1. संबद्धता, 2. मौलिकता, 3. औपन्यासिक सत्यता, 4. निर्माण कौशल, 5. रोचकता, 6. व्यापकता, 7. स्वाभाविकता।

3.1.2. संबद्धता :

संबद्धता कथावस्तु का प्रथम आवश्यक गुण है। कथानक में विविध घटनाएँ होती हैं। यदि उनमें परस्पर संबद्धता न हो तो कथावस्तु विश्रृंखलित हो जायेगी। परस्पर संबद्धता के कारण कथावस्तु में गरिमा आ जाती है और उसमें रूपात्मक संपूर्णता होती है। कुछ आधुनिक उपन्यासों में कथानक की संबद्धता पर बल नहीं दिया गया फिर भी वे सफल रहे। इसके पीछे यह कारण रहा है कि उनमें शिल्पगत नवीनता थी जिसके कारण पाठक शिल्पगत नवीनता से प्रभावित हो कथानक की संबद्धता की ओर इतना अधिक ध्यान नहीं देता। इस दृष्टि से उपन्यासकार की जिम्मेदारी यहाँ और अधिक बढ़ जाती है। उपन्यासकार का कार्य कथानक तत्व के क्षेत्र में केवल इतना ही नहीं है कि वह किसी कथावस्तु का चुनाव मात्र कर ले, वरन् इसके विपरीत उसका कार्य, कथा का चुनाव करने के पश्चात्, यह भी रहता है कि उसमें घटनात्मक संबद्धता और घटनात्मक के निर्धारण में विवेकपूर्ण सुनियोजन हो।

3.1.3. मौलिकता :

उपन्यास की कथावस्तु का दूसरा आवश्यक गुण उसकी वैचारिक मौलिकता है। उपन्यास की कथावस्तु में मौलिकता का होना उसमें कौतूहल, जिज्ञासा, चमत्कार और आनंद का गुण भरता है। मौलिकता का यह गुण उपन्यासकार की प्रतिभा पर निर्भर होता है। विषय चाहे कैसा भी हो उसमें वैचारिक तथा अनुभूत्यात्मक मौलिकता का निर्माण करना लेखक पर निर्भर करता है।

3.1.4. औपन्यासिक सत्यता :

औपन्यासिक सत्य की अभिव्यक्ति लेखक कथावस्तु के माध्यम से प्रस्तुत करता है। औपन्यासिक सत्य वास्तविक सत्य से भिन्न होता है। यह संभवनीय

सत्य या आभासित सत्य होता है। यह सत्य और कल्पना का सुंदर समन्वय होता है। इस संदर्भ में डॉ. प्रतापनारायण टण्डन का कथन ठीक ही लगता है कि, ''संभवतः ऐसे किसी भी कथानक की कल्पना करना कठिन है जो पूर्णतः सत्य पर आधारित हो, न शायद ऐसा कोई कथानक सोचा ही जा सकता है, जिसका मानव सत्य से कोई नाता न हो।''★ *(फणीनश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन, प्रो. अशोक वामनराव धुलधुले, अक्षय प्रकाशन, पृ. 17)*

3.1.5. निर्माण कौशल :

उपन्यास का क्षेत्र विस्तृत होता है, उसमें एक कहानी नहीं रखी जाती। उपन्यास में अनेक स्थल प्रस्तुत किये जाते हैं। जैसे एक महाकाव्यकार को मार्मिक स्थलों की पहचान की शक्ति और परिस्थिति निर्माण की शक्ति अपेक्षित होती है, वैसे ही एक उपन्यासकार के लिए भी इन दोनों शक्तियों की अपेक्षा है। उपन्यास की कथावस्तु की विभिन्न घटनाओं में संबद्धता, व्यापकता, मनोरंजकता, मौलिकता, कल्पना, स्वाभाविकता, सत्यता आदि सभी गुण विद्यमान हो किन्तु उपन्यासकार के पास निर्माण कौशल नहीं तो वह सुंदर उपन्यास नहीं प्रस्तुत कर सकता। उपन्यासकार विभिन्न परिस्थितियों से संबंधित विभिन्न घटनाओं का संयोज़न कर उन्हें इस ढंग से प्रस्तुत करता है कि उपन्यास का कुल प्रभाव काफी जोरदार हो जाता है।

3.1.6. रोचकता :

कथावस्तु का ऐसा गुण है, जिसके अभाव में अच्छे से अच्छा उपन्यास न पाठकों का मनोरंजन कर सकता है और न पठनीय हो सकता है। कथावस्तु में रोचकता की सृष्टि करना एवं उसमें प्रारंभ से अन्त तक रोचकता बनाये रखना उपन्यासकार की कसौटी ही है।

3.1.7. व्यापकता :

साहित्य का आनंद और उसकी व्यग्रता उसके विषय की व्यापकता पर निर्भर करते हैं। उपन्यास की कथावस्तु में व्यापकता होनी चाहिए। सम्भवतः इसी गुण को लेकर उपन्यास में महाकाव्य की–सी गरिमा आती है। उपन्यास में एक विस्तृत एवं बहुआयामी जीवन का चित्रण होता है, उसमें वैयक्तिता अथवा संकुचितता नहीं होती।

3.1.8. स्वाभाविकता :

साहित्य का संबंध जीवन से है। उपन्यास में जीवन का चित्र प्रस्तुत किया जाता है। अतः उपन्यास की कथावस्तु के लिए पहली शर्त यह है कि वह स्वाभाविक हो। उसमें चित्रित जीवन अतिरंजितता से युक्त अथवा अविश्सनीय न हो। इसके लिए आवश्यक है कि उपन्यासकार को जीवन की गहराई से ज्ञान हो। कथावस्तु के चर्चित सभी गुण इस स्वाभाविकता पर ही आधारित हैं क्योंकि उपन्यास एक निश्च्छल प्रवाह की तरह होता है उसे खींच–तान कर निर्मित नहीं किया जा सकता। कथावस्तु के इन गुणों के अतिरिक्त उपन्यास की सफलता में कथावस्तु के प्रस्तुतीकरण का भी अपना महत्व है।

कथावस्तु के प्रस्तुतीकरण के अनेक ढंग होते हैं क्योंकि प्रत्येक लेखक अपने ढंग से लिखता है। किन्तु कथावस्तु के प्रस्तुतीकरण की प्रमुखतः चार शैलियाँ होती हैं। यथा–1. वर्णनात्मक शैली, 2. आत्मकथात्मक शैली, 3. पत्रात्मक शैली, 4. दैनंदिनी शैली (डायरी शैली) इनके अतिरिक्त कथावस्तु प्रस्तुतीकरण की और भी शैलियाँ प्रचलित हैं। वे निम्नानुसार हैं : 1. विश्रृंखलित शैली, 2. व्यक्तिक्रम शैली, 3. मनोवैज्ञानिक अथवा चेतनाप्रवाह शैली।

3.2. पात्र एवं चरित्र–चित्रण :

उपन्यास में कथावस्तु के पश्चात् पात्र एवं चरित्र–चित्रण उसका दूसरा महत्वपूर्ण तत्व माना जाता है। चरित्र–चित्रण शब्द का अभिप्राय है कि उपन्यास में पात्रों को मूर्तिमता और स्वाभाविकता के साथ चित्रित करना। दूसरे शब्दों में उपन्यास के पात्रों के चरित्र का उद्घाटन तथा तर्कसंगत विकास, चरित्र–चित्रण है। वस्तुतः उपन्यास का विषय, मनुष्य और उसका जीवन होता है। पात्र एवं चरित्र–चित्रण के माध्यम से उपन्यासकापर इस जीवन के विविध रूपों तथा आयामों को उपस्थित करता है। कथा–साहित्य का मूलाधार चरित्र–चित्रण ही है। अन्य कुछ नहीं। अतः इस तत्व का महत्व उपन्यास में अन्य तत्वों की अपेक्षा अधिक हो जाता है।

3.2.1. चरित्र–चित्रण की परिभाषा

चरित्र–चित्रण के संबंध में कुछ विद्वानों ने परिभाषाएँ दी हैं:–

''वस्तुतः चरित्र वही कुछ होता है जो कि मनुष्य होता है।''[1]

– **एब्बट**

''चरित्र एक प्रकार की बौद्धिक, भावुक और हताश आदतों का सम्मिश्रण है।''[2]

– **विलियम आर्कट**

''मैं अपने उपन्यास में पात्रों को पूर्णतया स्वतंत्र छोड़ देता हूँ। मुझे चाहे जहाँ ले जा सकते हैं।''[3]

– **थेकरे**

''उत्कृष्ट चरित्र–चित्रण यह है जो सच्ची मनोभूमि से ही उद्भूत हो, आन्तरिक हो, मुक्त हो किन्तु जिसमें इतनी सजीवता, स्पष्टता और सहजता भी हो कि वह प्रत्येक पाठक के मनोलोक को भी झंकृत और अलंकृत कर सके, उसके व्यक्तित्व में रम सके।''[4]

– **डॉ. रवीन्द्रकुमार जैन**

"जिनके साथ औपन्यासिक घटनाएँ घटित होती हैं अथवा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से संबंधित होती हैं, जो उनसे विकास पाते हैं तथा उन्हें विकास देते हैं, वे प्राणी मनुष्य हो या मनुष्येतर, उपन्यास के पात्र कहलाते हैं।"[5]

– रणवीर रांग्रा

(1–5 श्री वृंदावनलाल वर्मा के उपन्यासों में नायिका परिकल्पना, डॉ. पी.के. इंदिराबाई, जयभारती प्रकाशन, पृ. 8)

आज उपन्यासों में मानव जीवन के चित्रण के साथ–साथ चरित्र–चित्रण को सबसे अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। नैतिक उद्देश्य का द्योतन करनेवाला कोई भी वक्तव्य या कार्य व्यापार चरित्र का व्यंजक होगा। चरित्र के द्वारा ही हम मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रकाश में लाते हैं। चरित्र में दो प्रकार के व्यक्तित्व होते हैं। बाहरी व्यक्तित्व और भीतरी व्यक्तित्व।

चरित्र में व्यक्तित्व के प्रकार

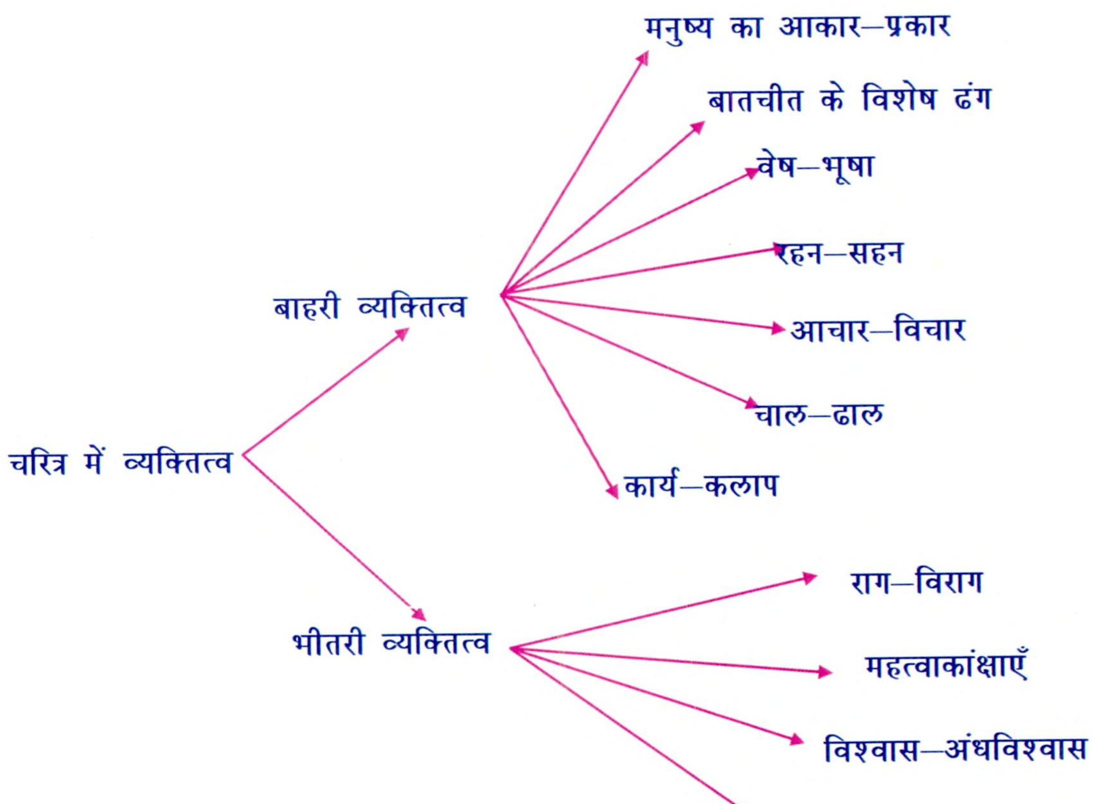

बाहरी व्यक्तित्व के अंतर्गत मनुष्य का आकार–प्रकार, बातचीत के विशेष ढ़ंग, वेष–भूषा, रहन–सहन, आचार–विचार, चाल–ढाल, कार्य–कलाप आदि आते हैं। इनसे पात्र के आन्तरिक व्यक्तित्व की झलक मिल जाती है। आज के मानव का आंतरिक महत्व ज्यादा है। पात्र के भीतरी व्यक्तित्व का चित्रण बाहरी व्यक्तित्व के चित्रण से कहीं अधिक कठिन होता है। भीतरी व्यक्तित्व के अंतर्गत पात्र का राग–विराग, महत्वकांक्षाएँ, विश्वास–अंधविश्वास, दया, करुणा, क्रूरता आदि अनेक गुणों का चित्रण आ जाता है। भद्रता, औचित्य, अनुकूलता तथा चारित्रिक एकरूपता आदि चरित्र के अन्य गुण बताये जा सकते हैं। हो सकता है कि मूल अनुकार्य के चरित्र में अनेकरूपता हो, फिर भी यह अनेकरूपता एक रूप होनी चाहिए।

उपन्यास में चरित्र–चित्रण तीन प्रकार से किया जाता है। यह चरित्र–चित्रण साहित्य के विभिन्न विधाओं में भिन्न–भिन्न प्रकार से किया जाता है। इसके संबंध में साहित्य कोश में लिखा है कि ''कथा के पात्रों को किस प्रकार उपस्थित किया जाए। यह कलाकृति के रूप, लेखक की रुचि तथा योग्यता और उसकी कृति के उद्देश्य पर निर्भर है।''★ *(श्री वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में नायिका परिकल्पना, डॉ. पी.के. इंदिराबाई, जयभारती प्रकाशन, पृ. 11)* मुख्यतः चरित्र–चित्रण की तीन विधाएँ होती हैं। 1. पात्रों के कार्यों द्वारा 2. पात्रों की बातचीत द्वारा 3. कथा–लेखक के कथन और व्याख्या के द्वारा।

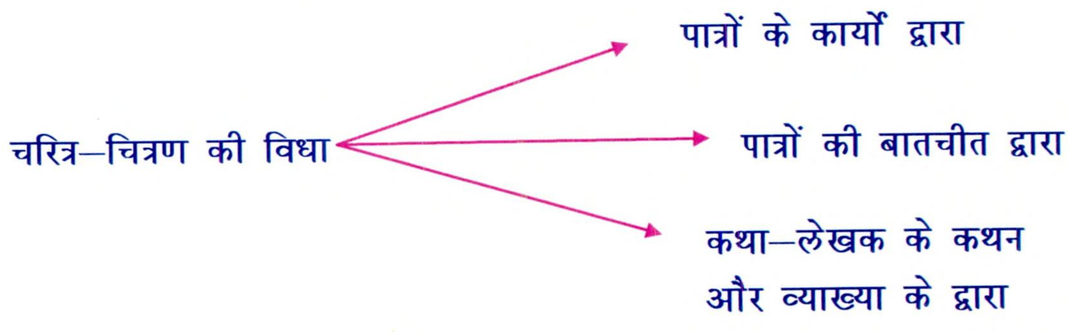

प्रथम दो चरित्र–चित्रण अधिक रूप से नाटकों में होता है। उसे अप्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण कहते हैं। तीसरे को विश्लेषणात्मक या प्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण कहते हैं। अप्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण की खूबी यह है कि दर्शक या पाठक तथा पात्रों के बीच सीधा संबंध रहता है और पात्रों के संबंध में धारणा बनाने की पाठक या दर्शक को पूर्ण स्वतंत्रता रहती है। प्रत्यक्ष चरित्र–चित्रण अधिक रूप से उपन्यास में होता है। विश्लेषणात्मक शैलियों को मिलाकर चरित्र–चित्रण विशद रूप में किया जाता है।

3.2.2. चरित्र–चित्रण की विशेषताएँ :

1. पात्र की अनुकूलता, 2. स्वाभाविकता, 3. संप्राणता 4. यथार्थता 5. सहृदयता 6. मौलिकता 7. अंतर्द्वंद्व 8. बौद्धिकता

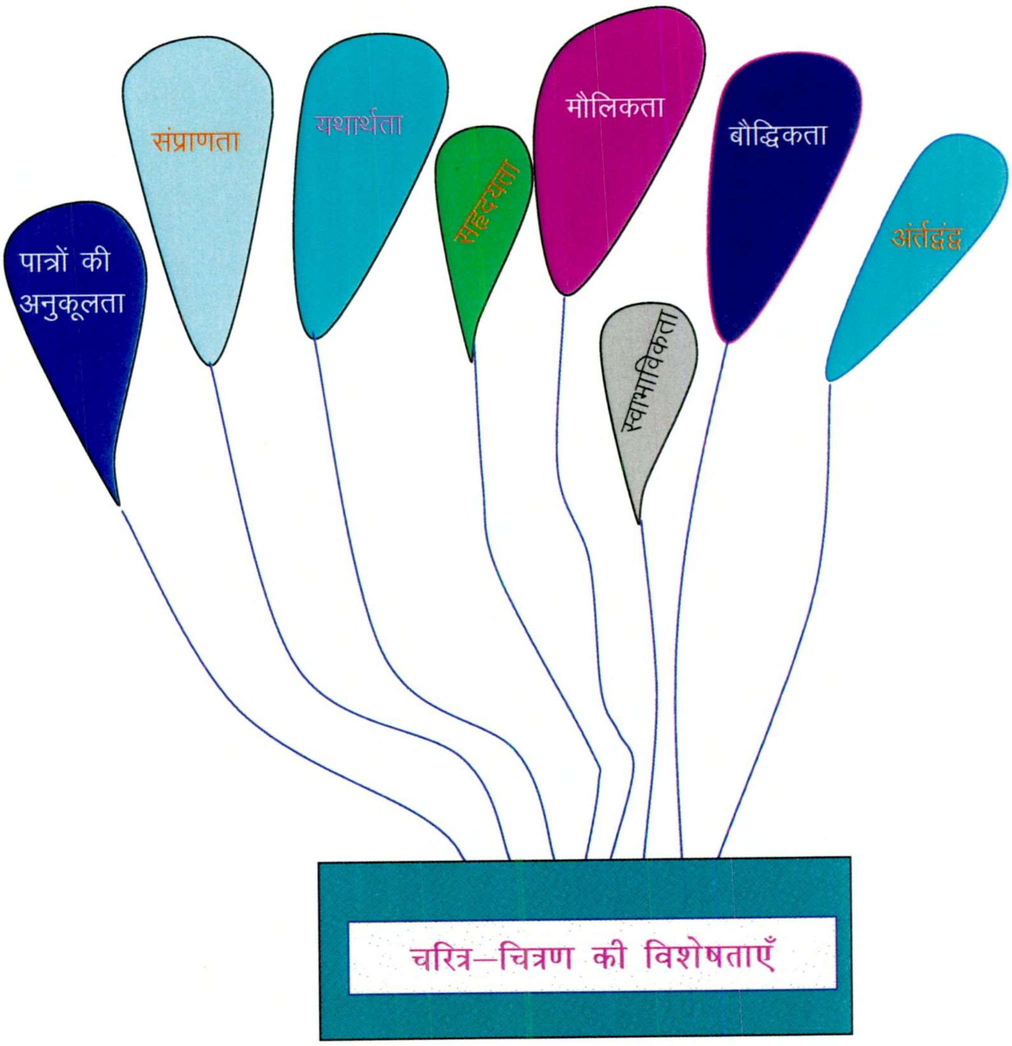

(i) पात्र की अनुकूलता :

उपन्यास में पात्रों के चरित्र–चित्रण की सर्वप्रथम विशेषता उसकी कथात्मक अनुकूलता है। उपन्यास का कथानक जिस युग और वातावरण पर आधारित हो, उसमें उसी प्रकार के पात्रों का प्रणयन होना चाहिए। उदाहरणार्थ यदि कोई उपन्यास इतिहास के किसी विशिष्ट युग की कथा पर आधारित है, तो उसके पात्रों का चयन भी उसी युग के इतिहास से करना, जिससे युगीन परिवेश का सम्यक चित्रण हो सके।

(ii) स्वाभाविकता :

पात्र अथवा चरित्र–चित्रण का दूसरा आवश्यक गुण स्वाभाविकता है। यह चरित्र–चित्रण का विशिष्ट गुण है क्योंकि उपन्यास के पात्रों का यही गुण उसके पाठकों पर विशेष प्रभाव डाल सकता है और उन्हें अपनी धारावाहिकता के साथ वहाँ ले जा सकता है। पाठक किसी पात्र की अनुभूति के प्रति तभी संवेदना रख सकेगा जब वह विश्वसनीय प्रतीत होगा। जहाँ चरित्र–चित्रण स्वाभाविक होता है। वहाँ सब कुछ स्वयं नदी की स्वच्छंद धारा के समान गतिशील होता है। उपन्यासकार इस भाव में स्वयं बहता है, वह धारा को मोड़कर उसको कृत्रिम धारा का रूप देना नहीं चाहता।

(iii) संप्राणता :

चरित्र–चित्रण का यह गुण एक दृष्टि से उसका प्राणतत्व कहा जाता है। वास्तव में पात्रों की संप्राणता उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का आधार होती है अन्यथा पात्र कठपुतली–सा हो जाने की सम्भावना रहती है। पात्रों की कथानक में कार्यस्थिति और उनके प्रतिक्रियात्मक व्यवहार से भी इस विशेषता का संबंध होता है।

(iv) यथार्थता :

जिस प्रकार उपन्यास के कथावस्तु तत्व से काल्पनिकता और यथार्थता का प्रश्न जुड़ा होता है उसी प्रकार पात्र या चरित्र–चित्रण का चुनाव करता है। वे स्वाभाविक रूप से समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाले होते हैं। इस दृष्टिकोण से उपन्यास के चरित्रों का कम से कम उस सीमा तक अवश्य यथार्थ होना चाहिए जहाँ तक वे मानव–जीवन का वास्तव–आभास उत्पन्न कर सके।

(v) सहृदयता :

उपन्यास के पात्र मानव–चरित्र होते हैं। अतः उनमें मानव गुणों का सहज–विकास उपन्यासकार करता है। पात्रों की यह मानवीयता ही उनकी सहृदयता को भी प्रकट करती है। उपन्यास के विभिन्न पात्र यदि एक दूसरे के दुख–सुख से प्रभावित नहीं होते तथा अपने सुख–दुख में दूसरे पात्र की सहानुभूति और संवेदना को अर्जित नहीं करते तो वे हृदयहीन प्रतीत होंगे। इसलिए सहृदयता का गुण भी अनिवार्यतः अपेक्षित है।

(vi) मौलिकता :

उपन्यास में लेखक जिन पात्रों की सर्जना करते हैं वे आर्थिक सामाजिक रूप से किसी वर्ग के प्रतिनिधि भी बनते हैं। इस एक वर्ग में आनेवाले पात्रों की मौलिकता एक आवश्यक गुण है। पात्र एक वर्ग प्रतिनिधि होने पर भी वह उसी वर्ग के अन्य पात्र की प्रतिकृति नहीं होता। समाज, वर्ग की सीमा में रहते हुए ये पात्र अपनी व्यक्तिगत विशिष्टता लिये होते हैं। यही उनकी मौलिकता है।

(vii) अन्तर्द्वंद्व :

मनुष्य जीवन में मनुष्य को सदैव व्यक्ति और स्थितियों से संघर्ष करना पड़ता है। कभी–कभी पात्र जब अपने किये पर पुनर्विचार करता है तो अपने कार्य

और उसके परिणाम के संदर्भ में, उसकी युक्तियुक्तता के संबंध में, भले–बुरे के संदर्भ में, उसकी चेतना में उदेलन होते रहते हैं। यह उदेलन ही अर्न्तद्वंद्व है। जहाँ मनुष्य के चेतन और अवचेतन का संदर्भ इस अन्तःसंघर्ष के द्वारा पात्रों का चरित्र–चित्रण अधिक स्पष्ट रूप से प्रभावित होता है, यह अन्तःसंघर्ष पात्र की कार्यशीलता को प्रभावित करता है और उनके कार्यकलापों का आधार बनता है।

(viii) बौद्धिकता :

आधुनिक युग में उपन्यास केवल मनोरंजन का साधन नहीं है बल्कि उसके साथ–साथ वह पाठक की बौद्धिक क्षुधा की भी तृप्ति करने में सक्षम हो गया है। इसलिए आधुनिक युगीन उपन्यासों में पात्रों के चरित्र–चित्रण में बौद्धिकता का समावेश प्रायः बढ़ता जा रहा है। बौद्धिकता का प्रयोग अधिकांशतः विचार प्रधान उपन्यासों में अधिक रहता है। उपन्यासों में जब से विविध दार्शनिक सिद्धान्तों तथा वैचारिक आंदोलनों का समावेश होने लगा है, तब से उनमें बौद्धिकता का आधिक्य हो गया है।

इस प्रकार उपन्यासों के पात्रों के चरित्र–चित्रण में उपर्युक्त कतिपय विशेषताओं के साथ–साथ कलात्मक तत्वों का भी संयोजन होना चाहिए। इन विविध गुणों के समावेश का परिणाम यह होता है कि ये पात्र काल्पनिक नहीं प्रतीत होते और अधिक वास्तव का आभास देते हैं। वास्तव में उपर्युक्त तत्वों के साथ कलापूर्ण चरित्र–चित्रण ही, किसी उपन्यास के पात्र प्राणवान् तथा कथावस्तु के विकास में सहायक बनाता है। पात्र पाठकों पर अपना प्रभाव डालने में भी समर्थ होते हैं।

3.2.3. पात्रों का वर्गीकरण :

उपन्यास अपने समग्र रूप में सम्पूर्ण समाज का चित्र कहा जाता है। इस दृष्टि से प्रत्येक उपन्यास के पात्र अनिवार्य रूप से समाज के किसी वर्ग के प्रतिनिधि होते हैं। पात्रों का सर्वप्रथम भेद इसी वर्गगत भिन्नता के आधार पर किया जाता है। वास्तव में 'वर्ग' शब्द का एक विशेष पारिवारिक अर्थ है। सामान्यतः मनुष्य के केवल उसी समूह या श्रेणी को वर्ग कहा जाता है, जिसके आर्थिक हितों में कोई भिन्नता न हो। उपन्यास के पात्र प्रायः विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि होते हैं तथा अपने–अपने वर्गों का दृष्टिकोण और विचारधारा प्रस्तुत करते हैं। पात्रों को अन्यान्य विद्धानों ने कई वर्गों में विभाजित किया है जैसे प्रमुख पात्र, सहायक पात्र, पुरुष और स्त्री पात्र, खल पात्र, यथार्थवादी पात्र, व्यक्तिवादी पात्र, मनोवैज्ञानिक पात्र आदि। पात्रों का वर्गीकरण तीन प्रकार से किया जाता है। वैयक्तिक, सामूहिक और मानवीय।

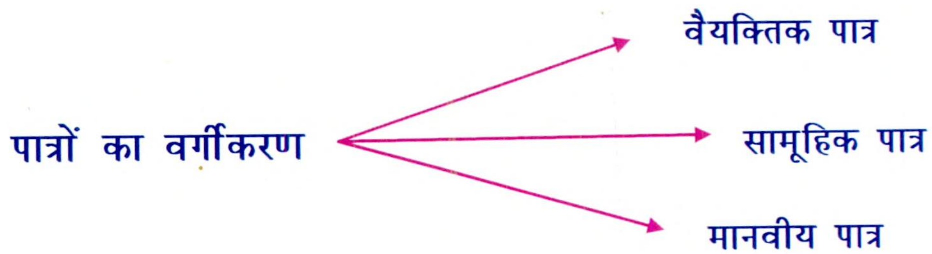

(i) वैयक्तिक पात्र :

वैयक्तिक पात्रों में अपनी निजी विशेषताएँ अधिक होती हैं। उनका रहन–सहन, सोच–विचार आदि दूसरे लोगों से कुछ भिन्न प्रकार का होता है। इसका अभिप्राय यह है कि उनके चरित्र की विशेषताओं को विकसित दिखाया जाता है, जिनके आधार पर उन्हें सर्वसाधारण के साथ नहीं लिया जा सकता। इन पात्रों का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व होता है। 'चित्रलेखा' के कुमारगिरि इस तरह का एक पात्र है।

(i) सामूहिक पात्र :

जो व्यक्ति अपनी जातीय विशेषताओं के कारण समाज शास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि से महत्वपूर्ण रहता है।

(iii) मानवीय पात्र :

जो, व्यक्ति और समाज के समस्त बंधनों का उल्लंघन कर मानवता की एकता की घोषणा करता है। विशिष्ट पात्र की रचना के लिए उपन्यासकार को कुछ विशेष गुणों का ध्यान रखना आवश्यक है। वे ये हैं :–

❖ पात्र में सम्पूर्ण मानवीय और सामाजिक तत्व अपनी चरम सीमा पर विकसित हो।

❖ इन मानवीय और सामाजिक तत्वों में भी संभावनाओं का उद्घाटन हो।

❖ इस चित्रण में मानवीय और सामाजिक तत्वों की अतिवादी सीमा का दर्शन भी स्पष्ट रूप से करा दिया जाए।

❖ मनुष्य तथा युग की, विकास उच्चता स्पष्ट रूप से हमारे सामने स्पष्ट की जाय।

भारतीय और मार्क्सवादी आलोचकों का मत यही है कि जिस पात्र में व्यक्तिगत विशेषताएँ प्रधान न होकर समाजगत विशेषताओं की प्रधानता रहती है वही 'टाइप' कहा जाता है। इस संबंध में एँगिल्स का कथन है – ''हर एक व्यक्ति एक नमूना है, साथ ही उसका अपना अलग व्यक्तित्व भी है।''★ *(श्री वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में नायिका परिकल्पना, डॉ. पी.के. इंदिराबाई, जयभारती प्रकाशन, पृ. 13)* हर एक व्यक्ति में समाजगत और वैयक्तिक दोनों प्रकार के गुण होते हैं। मार्क्स, लेनिन, गोर्की आदि सभी ने इस बात को स्वीकार किया है कि जब तक पात्र में व्यक्तिगत विशेषताएँ नहीं होंगी तब तक वह इस दुनिया का

व्यक्ति नहीं माना जायेगा। प्रेमचंदजी भी पात्रों की स्वाभाविकता और सफलता की कसौटी इसी टाइप और व्यक्तिगत विशेषता के अपूर्व समन्वय को मानते हैं।

अगर पाठक का यह भाव हो कि इस दशा में ऐसा नहीं होना चाहिए था तो इसका यह आशय हो सकता है कि लेखक अपने चरित्र को अंकित करने में असफल रहा। चरित्रों में कुछ न कुछ विशेषता भी रहनी चाहिए। जिस प्रकार संसार में कोई दो व्यक्ति समान नहीं होते, उसी भाँति उपन्यास में भी नहीं होना चाहिए। कुछ लोग तो बातचीत या शकल–सूरत से विशेषता उत्पन्न कर देते हैं लेकिन असली अन्तर वह है, जो चरित्रों में हो।

3.2.4. पात्रों के भेद :

उपन्यास की कथावस्तु की दृष्टि से पात्रों के दो भेद किये जा सकते हैं। 1. प्रधान पात्र, 2. गौण पात्र।

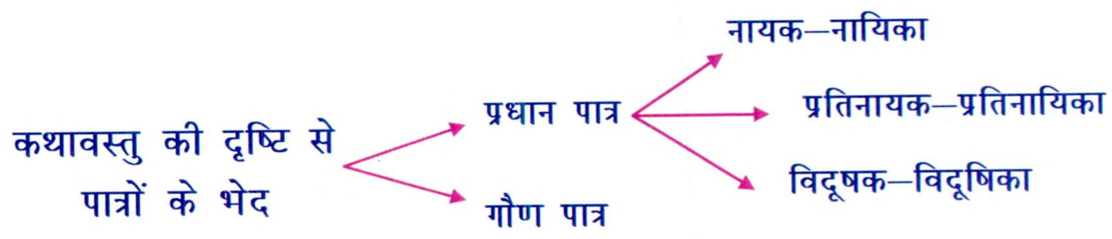

(i) प्रधान पात्र :

उपन्यास की कथावस्तु को गतिशील रखने में जिन पात्रों का पूर्णतः योगदान है, उन्हें प्रधान पात्र कहते हैं। इन्हीं पात्रों से उपन्यास की कथावस्तु प्रमुखतः संबोधित होती है और इन्हीं के कारण विकसित भी। प्रधान पात्रों में नायक–नायिका, प्रतिनायक–प्रतिनायिका, विदूषक–विदूषिका आदि का समावेश किया जाता है।

(ii) गौण पात्र :

उपन्यास में जिन पात्रों का प्रयोग सहायक के रूप में होता है उन्हें गौण पात्र कहते हैं। गौण पात्रों के माध्यम से प्रधान पात्रों के चरित्र में प्रभावात्मकता लायी जाती है। गौण पात्र पृष्ठभूमि मात्र होते हैं, जिनके कारण प्रधान पात्रों का रूप स्पष्ट उभर आता है। दूसरे शब्दों में कथानक को गति देना, वातावरण की सृष्टि करना तथा अन्य पात्रों के चरित्र को प्रकाशित करना यह गौण पात्रों का कार्य होता है।

चरित्र विकास की दृष्टि से भी पात्रों के भेद किये जाते हैं। 1. स्थिर पात्र, 2. गतिशील पात्र।

चरित्र विकास की दृष्टि से पात्रों के भेद
- स्थिर पात्र (अपरिवर्तनशील 'टाइप')
- गतिशील पात्र (परिवर्तनशील)

चरित्र–चित्रण की विधियाँ :

उपन्यासकार को पात्रों का चरित्र–चित्रण करने के लिए भिन्न–भिन्न विधियों का सहारा लेना पड़ता है। चरित्र–चित्रण की प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से, प्रयोग में लायी जाने वाली अनेक विधियाँ हैं। उनमें से कुछ प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित हैं :–

चरित्र–चित्रण की विधियाँ
- विश्लेषणात्मक विधि
- अभिनयात्मक विधि
- आत्मकथात्मक विधि
- संवादात्मक विधि
- विवरणात्मक विधि
- संकेतात्मक विधि
- मनोवैज्ञानिक विधि

3.3. कथोपकथन अथवा संवाद :

उपन्यास का तीसरा मूल तत्व कथोपकथन अथवा संवाद है। स्थूल रूप से किसी वर्णनात्मक कृति में पात्रों की बातचीत के लिए 'कथोपकथन' शब्द प्रयुक्त होता है। कथोपकथन का स्वरूप इतना विविधतापूर्ण है कि उसे आज तक ठीक से परिभाषाबद्ध करना संभव नहीं हो सका है। सभी प्रकार के संवादों में कुछ तत्व सामान्य रूप से पाये जाते हैं। मनुष्य रूप से देखा जाए तो संवादों द्वारा कुछ विचारों को सजीवता देने में सरलता पड़ती है। वस्तुतः कथोपकथन के प्रमुख उद्देश्य तीन हैं :– (क) कथानक का विस्तार करना (ख) पात्रों की व्याख्या करना (ग.) लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट करना।

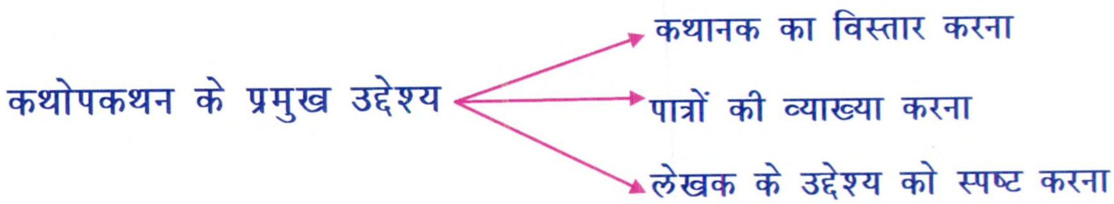

कथोपकथन के कुछ गुण होते हैं। इन गुणों पर ही कथोपकथन की सफलता निर्भर होती है।

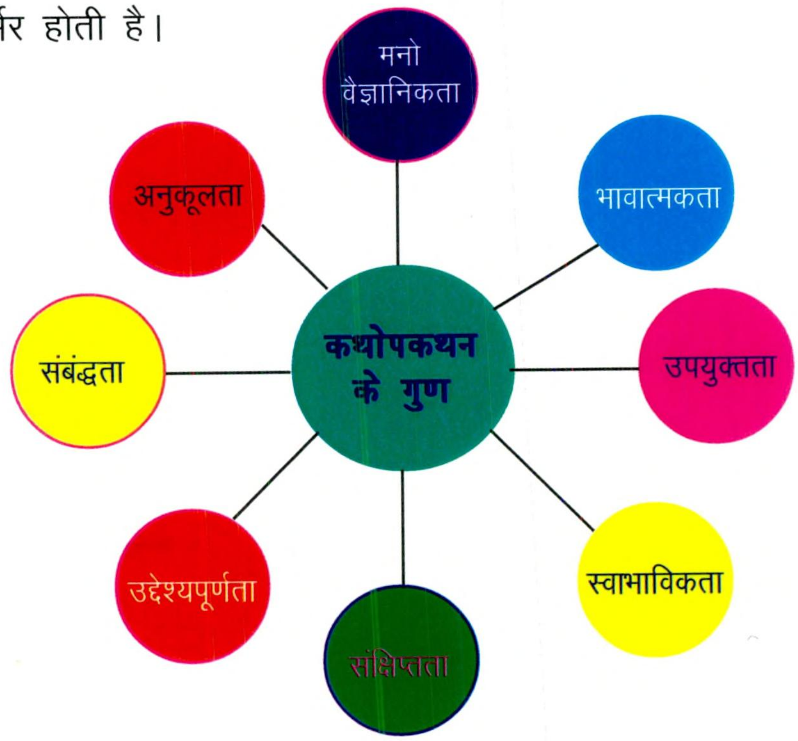

उपन्यास में कथोपकथन का उपन्यास की घटना, अवसर तथा वातावरण के उपयुक्त होना बहुत आवश्यक है। उसका समावेश उपन्यास में स्वाभाविक रूप से और आवश्यकतानुरूप होना चाहिए। उसका संक्षिप्त होना उसकी प्रभावात्मकता में वृद्धि करता है। उपन्यास में प्रत्येक कथोपकथन सोद्देश्य होना चाहिए। उसके माध्यम से उपन्यासकार जिस बात को कह रहा हो, उसमें कथानक तथा पात्रों से किसी न किसी प्रकार का प्रत्यक्ष पारस्परिक संबंध अवश्य होना चाहिए एवं पात्रों के सामाजिक, बौद्धिक और सांस्कृतिक स्वरूप के अनुकूल होना चाहिए। चरित्र–चित्रण में सूक्ष्मता लाने के लिए कथोपकथन में मनोवैज्ञानिकता का होना अत्यंत आवश्यक है। भावात्मकता का गुण भी उपन्यास को प्रभावशाली बनाने में सहायक होता है।

3.4. देशकाल एवं वातावरण :

उपन्यासकार जो रचना प्रस्तुत करता है, उसका संबंध किसी न किसी स्थान विशेष से होता है। देश या स्थान में राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों और परंपराओं आदि को ग्रहण किया जाता है। किन्तु ये सारी स्थितियाँ सर्वदा एक समान नहीं होती, वरन् निरन्तर परिवर्तनशील रहती हैं। इसका कारण देश के साथ काल संबंद्ध रहता है और दोनों के आधार पर ही राजनीतिक, सामाजिक आदि विशेषताओं का अंकन उपन्यास में होता है। डॉ. प्रतापनारायण टण्डन के शब्दों में, ''देशकाल के अन्तर्गत सामान्य रूप से किसी भी देश अथवा समाज की सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ, आचार–विचार, रहन–सहन, रीति–रिवाज तथा समाज की कुरीतियों या विशेषताएँ आदि समझी जाती हैं।''* *(फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन, प्रो. अशोक वामनराव धुलधुले, अक्षय प्रकाशन, पृ. 28)* उपन्यासकार का उद्देश्य प्रधानतः प्रभाव–निर्मित है और प्रभाव निर्मित के लिए देशकाल का चित्रण आवश्यक होता है। कोई भी पात्र अपने परिवेश में जीता है। परिवेश से विच्छिन्न

परिस्थिति में उसका चित्रांकन अत्यंत कठिन होता है। परिस्थितियाँ उसके निर्माण में स्थित रहती हैं।

उपन्यासकार जब अपने पात्रों को अपनी रचना में जीवन के विविध पक्षों को अनुभूत करने के लिए और क्रिया–प्रतिक्रिया के लिए योजित करता है तो वह उन्हें देश–काल से सम्बन्ध स्थिति में ही दिखलाता है। ऐसा होने पर ही पात्रों में सजीवता होगी और कथानक प्रवाह अविच्छिन्न बना रहेगा। इसी कारण कथानक पात्र, वास्तविक पात्र के समान देशकाल के बंधन में रहते हैं।

लेखक जिस वस्तु विशेष को अपने पाठकों तक संप्रेषित करना चाहता है उसका उचित रीति से संप्रेषण हो सके इसलिए लेखक को देशकाल की सूक्ष्मतम विशेषताओं का सम्यक् ज्ञान होना चाहिए। समाज, संस्कृति, धर्म, रीति–परंपरा, वेश–भूषा आदि के संबंध में उसका निश्यचयात्मक ज्ञान होना चाहिए; क्योंकि इन्हीं के सहारे वह अपने कथानक को खड़ा कर सकता है। रामलखन शुक्ल के अनुसार, उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त, ''लेखक को भौगोलिक जानकारी भी बहुत अच्छी होनी चाहिए। किसी प्रदेश–विशेष का वर्णन करते समय लताओं, गुल्मों, वृक्षों, फूलों, शास्त्र आदि के वर्णन देश–काल के अनुकूल हैं। ये देखने में सामान्य से लगते हैं किन्तु रचना में इनका विशेष महत्व होता है।''★ *(फणीश्वरनाथ 'रेणु' के उपन्यासों का शिल्पगत अध्ययन, प्रो. अशोक वामनराव धुलधुले, अक्षय प्रकाशन, पृ. 29)* देशकाल वातावरण को अपने उपन्यास में प्रस्तुत करते समय उपन्यासकार को चाहिए कि वह निम्नलिखित बातों की ओर विशेष ध्यान दें।

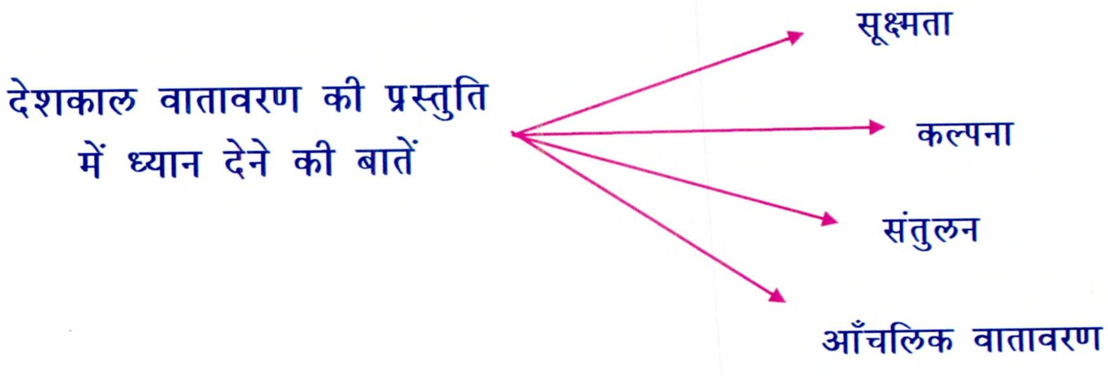

देशकाल और वातावरण संबंधी वर्णन सूक्ष्म तथ्यपरक होना चाहिए। संतुलित, मर्यादित और अनुपातिक रूप में कल्पना तत्व का समावेश उपन्यास के इस उपकरण का एक आवश्यक गुण होता है। आँचलिक वातावरण में क्षेत्र की भौगोलिक अवस्थिति और प्राकृतिक बनावट के साथ स्थानीय गतिविधियों, रहन–सहन, सांस्कृतिक धारा, परंपरागत जीवन–विधान, बातचीत, प्रचलित उक्तियों, कलात्मक अभिरुचियों आदि के तत्व भी समाविष्ट रहते हैं।

3.5. भाषा तथा शैली :

प्रत्येक प्रकार की कल्पना–प्रधान रचना में शैली का विशेष महत्व होता है। मूलतः शैली ही एक ऐसा तत्व है जो रचनाकार के वैशिष्ट्य का उद्घोष करता है। विषय वस्तु की जिन प्रणालियों से तथा जिन साधनों से प्रस्तुत करने का प्रयत्न होता है, उन सबका समावेश शैली तत्व में हो जाता है। शैली पर उपन्यास की सफलता अधिकांशतः निर्भर करती है। शास्त्रीय दृष्टिकोण से शैली के अन्तर्गत प्रायः वे तत्व आते हैं जिन्हें स्थूलतः भाषा तत्वों के अन्तर्गत रखा जाता है। परंतु उपन्यास में शैली के विशेष अर्थ के अन्तर्गत कथावस्तु का नियोजन और पात्र रचना आदि भी आ जाता है। इसलिए शैली का संबंध उपन्यास के भिन्न–भिन्न उपकरणों से रहता है, यद्यपि प्रथमतः वह कथा–तत्व और द्वितीयतः पात्र–तत्व से संबंधित होता है।

उपन्यास में संगठन, व्यवस्था, क्रम और सगति की अपेक्षा होती है। इसकी भाषा–शैली प्रसाद और माधुर्य गुण से संबंधित होती है। परिस्थिति के अनुकूल आज का समावेश भी होता है। उपन्यास की भाषा में लोकोक्तियों, मुहावरों, उपमाओं, अलंकारों और सम्यमूलक चित्रों आदि की योजना की जाती है।

उपन्यास की भाषा सहज, प्रवाहमय होनी चाहिए। उसमें इतनी शक्ति होनी चाहिए कि वह पाठकों को प्रभावित कर सके। इसके लिए उपन्यासकार को निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

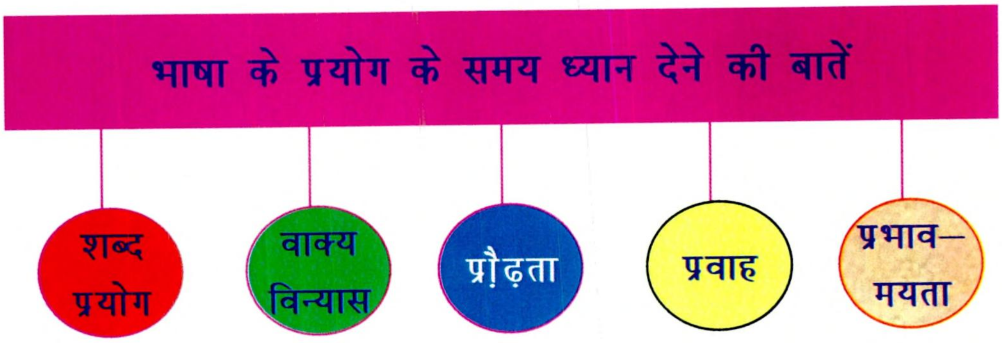

भाषा का सबसे बड़ा गुण है प्रभावमयता। लेखक की चरम सफलता इसी में निहित है। भाषा–शैली की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। प्रत्येक लेखक की अपनी अलग भाषा–शैली होती है। वही उसका वैशिष्ट्य होता है। फिर भी स्थूल दृष्टि से शैलियाँ निम्न प्रकार की हो सकती हैं।

1. वर्णनात्मक शैली
2. विश्लेषणात्मक शैली
3. आत्मकथात्मक शैली
4. डायरी (दैनंदिनी) शैली
5. पत्रात्मक शैली
6. पूर्वदीप्ति (फ्लैश बैक) शैली
7. कथोपकथन या संवाद शैली
8. नाटकीय शैली
9. काव्यात्मक या भावात्मक शैली
10. लोक कथात्मक शैली
11. मनोविश्लेषणात्मक शैली
12. आँचलिक शैली
13. मिश्रित शैली

3.6. उद्देश्य :

उपन्यास आधुनिक युग में अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम माना जाता है। इस दृष्टि से उसकी समानता अन्य साहित्यांग नहीं कर सकते। वास्तव में उपन्यासकार अपनी कृति में किसी विशिष्ट दृष्टिकोण का सहारा लेता है और

उसके आधार पर मानव–जीवन का मूल्यांकन करते हुए अपने जीवन दर्शन का स्वष्टीकरण करता है। वह मनुष्य के जीवन के विविध पक्षों को गहराई से परखने की चेष्टा करता है।

उपन्यास की प्रस्तुति के पीछे लेखक का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है, किन्तु वह उद्देश्य आरोपित न होकर रचना प्रविधि में ही स्वाभाविक रूप में विकसित होता है। उसे अलग करके नहीं देखा जा सकता, वरन् रचना में वह बिखरा होता है। वस्तुतः रचनाकार जीवन–जगत् के प्रति जो दृष्टिकोण रखता है, उसका प्रसार देखना चाहता है। वह उसी से प्रभावित होकर जीवन की आलोचना और व्याख्या करता है। कभी–कभी किसी सिद्धांत विशेष को भी प्रस्तुत करने के उद्देश्य से और उसके माध्यम से पाठकों में नवीन प्रभाव सृष्टि के उद्देश्य से, वह अपनी रचना प्रस्तुत करता है।

उपन्यास का परम्परागत उद्देश्य, कथा साहित्य के अन्य माध्यमों की भाँति पाठक का मनोरंजन करना है। किन्तु उपन्यास का अपना महत्व है। वह केवल मनोरंजन का साधन न होकर अधिक महान तथा गंभीर उद्देश्य का साधन है, जिसे हम आनंद की उपलब्धि कह सकते हैं। लेखक उपन्यास रचना से अपने पाठकों को आनंद प्रदान करता है। उसकी रचना जितनी प्रभावपूर्ण होगी, जितनी लोक–मंगल विधायिनी होगी और आदर्श तथा नीति की भावना से अनुप्राणित होकर जितनी स्वाभाविक होगी, रचना उतनी ही उत्कृष्ट होगी। उसमें अधिक आनंद प्रदान करने की शक्ति तथा वह रचना परिपुष्ट सिद्ध हो सकेगी। मानव–मूल्य की स्थापना उपन्यास का एक उद्देश्य होता है और इसे लेखक मानव–चरित्र के विभिन्न आयामों के उद्घाटन–विश्लेषण से संपादित करता है। उपन्यास की रचना के पीछे कोई न कोई विशिष्ट उद्देश्य या जीवन के प्रति विशिष्ट दृष्टिकोण मिलता है। उपन्यास में, उद्देश्य पूर्ति के लिए भी लेखक प्रायः दो विधियों का

आश्रय लेता है। इनमें से प्रथम विधि को प्रत्यक्ष तथा दूसरी को अप्रत्यक्ष कहा जाता है।

4. उपन्यास के विविध रूप :

उपन्यास का क्षेत्र व्यापक है। आधुनिक युग में उपन्यास के अनेक रूप सामने आये हैं। उनका प्रवृत्तिगत वर्गीकरण करके ही इसका सम्यक् अध्ययन किया जा सकता है। उपन्यास के प्रमुख प्रकार निम्नानुसार हैं। 1. तिलिस्मी उपन्यास 2. जासूसी उपन्यास 3. ऐतिहासिक उपन्यास 4. सांस्कृतिक उपन्यास 5. सामाजिक उपन्यास 6. यथार्थवादी उपन्यास 7. मनोवैज्ञानिक उपन्यास 8. राजनीतिक उपन्यास 9. आँचलिक उपन्यास 10. आदर्शवादी उपन्यास 11. घटना प्रधान उपन्यास 12. चरित्र प्रधान उपन्यास

4.1. ऐतिहासिक उपन्यास :

ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास और वर्तमान का तथा यथार्थ और कल्पना का संतुलित समन्वय होता है। ऐतिहासिक उपन्यासों के लिए ऐतिहासिक विकास के किसी भी युग से कथा का चयन क्यों न किया गया हो, उस युग की पृष्ठभूमि और विवरण कथा के निर्वाह और विकास के लिए आवश्यक होता है। इस प्रकार के उपन्यासों के मुख्य पात्रों का इतिहास–सिद्ध होना आवश्यक है। उन पात्रों के कार्यकलाप का भी अधिकांश भाग ऐतिहासिक दृष्टि से प्रामाणिक होना चाहिए।

ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पना भी कलात्मक होने पर यथार्थ सी हो जाती है। ऐतिहासिक उपन्यासकार को मानव–जीवन के व्यावहारिक स्वरूप में से घटनाओं एवं पात्रों का चयन करना होता है। किन्तु इसी के साथ निश्चित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, प्रभावशाली ऐतिहासिक वातावरण तथा गम्भीर उद्देश्य भी आवश्यक है। ऐतिहासिक पात्रों एवं कथानकों को आधार बनाकर लिखनेवाले हिन्दी उपन्यासकारों में वृंदावनलाल वर्मा, आचार्य चतुरसेन, गुरुदत्त, अमृतलाल नागर, हजारीप्रसाद द्विवेदी, राहुल सांस्कृत्यायन तथा यशपाल के नाम प्रमुख हैं। लैसली स्टीफन के अनुसार ऐतिहासिक कथानक अच्छे उपन्यास का आधार होते हैं। ऐतिहासिक उपन्यासकार का दायित्व सदा दुहरा होता है। उसे इतिहास के मूल तथ्यों की रक्षा करते हुए मानवीय सच्चाई को उपन्यास में अंकित करना होता है।

हिन्दी ऐतिहासिक उपन्यासों में दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। एक ओर तो वे उपन्यासकार हैं जो इतिहास को साम्यवादी विचारों को प्रमाणित करने के लिए प्रयोग करते हैं। उनका लक्ष्य इतिहास लिखना नहीं रहता। इस श्रेणी के उपन्यासकारों में यशपाल तथा राहुल सांस्कृत्यायन का नाम आता है। दूसरी ओर वे उपन्यासकार हैं जो कि मानवतावादी दृष्टि से वर्तमान के संदर्भ में अतीत

का चित्रण करते हैं। इस श्रेणी में वृंदावनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, अमृतलाल नागर, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी आदि के उपन्यासों को लिया जा सकता है।

ऐतिहासिक उपन्यास एक समस्त पद है जो इतिहास एवं उपन्यास के योग से बना है – इतिहास + उपन्यास। अर्थात् जिस उपन्यास में इतिहास मिश्रित हो वह ऐतिहासिक उपन्यास माना जायेगा। कोई भी कृति ऐतिहासिक उपन्यास तभी मानी जायेगी जबकि वह इतिहास के दर्शन करा सकने में समर्थ हो। इससे यह स्पष्ट है कि ऐतिहासिक वातावरण ऐतिहासिक उपन्यास का प्राणतत्व है। यदि अपनी मनोरम कल्पना–शक्ति के बल पर उपन्यासकार उपन्यास में ऐतिहासिक वातावरण की अभिवृद्धि कर लेता है तो वह प्रभावशाली ऐतिहासिक उपन्यास होगा।

ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत काल की घटनाओं, पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं, वातावरण, देशकाल आदि के समन्वय को कल्पना का परिधान पहनाकर प्रस्तुत करता है, क्योंकि यह नितान्त सत्य है कि उपन्यास इतिहास नहीं है। औपन्यासिक पात्रों के निर्माण परिस्थितियों का ही प्रभाव पड़ता है। इसलिए ऐतिहासिक उपन्यासों के पात्रों के चरित्र में हम तत्कालीन समाज की सारी विशेषताएँ जान लेते हैं। उस युग की विचारधारा, आदर्श और प्रचलित रीति–नीति के कारण मनुष्यों के व्यक्तिगत जीवन की गति, किस प्रकार एक विशेष परिस्थिति में पड़कर क्रमशः विकसित होती है, यह हमें ऐतिहासिक उपन्यासों से ज्ञात हो सकता है।

4.2. ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण :

उपन्यास में ऐतिहासिक घटना, पात्र और वातावरण की दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण तीन प्रकार से किया जा सकता है। 1. घटना प्रधान 2. चरित्र प्रधान 3. वातावरण प्रधान

ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण

ऐतिहासिक घटना, पात्र और वातावरण की दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण

→ घटना प्रधान
→ चरित्र प्रधान
→ वातावरण प्रधान

विषय के प्रतिपादन के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण छः प्रकार से किया जा सकता है।

1. प्रेम प्रधान और घटनाप्रधान ऐतिहासिक उपन्यास
2. इतिहास प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास
3. राजनीतिक और राष्ट्रप्रेम प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास
4. समस्या प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास
5. संस्कृति प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास
6. मनोवैज्ञानिक विचारपूर्ण ऐतिहासिक उपन्यास

विषय के प्रतिपादन के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण

→ प्रेम प्रधान और घटना प्रधान
→ इतिहास प्रधान
→ राजनीतिक और राष्ट्रप्रेम प्रधान
→ समस्या प्रधान
→ संस्कृति प्रधान
→ मनोवैज्ञानिक विचारपूर्ण

इतिहास प्रयोग की पद्धति के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण चार प्रकार से किया जा सकता है।

ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण

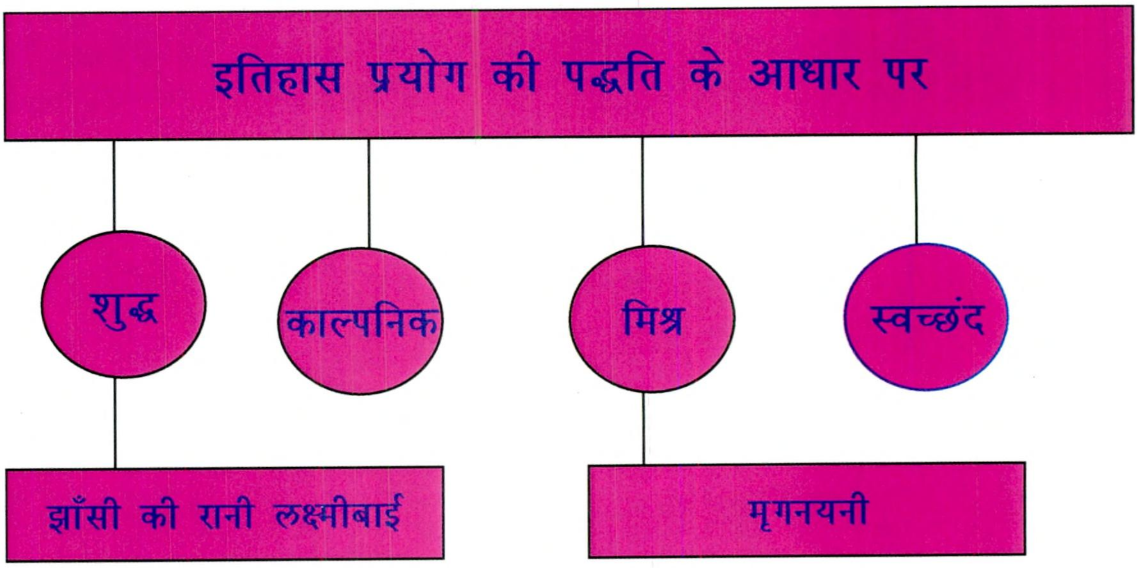

4.3. ऐतिहासिक उपन्यास की विशिष्टताएँ :

- ❖ ऐतिहासिक उपन्यास कलाकृतियों का वह रूप है जिसमें विभिन्न कलाओं का संगम होता है।
- ❖ ऐतिहासिक उपन्यासों में विभिन्न ऐतिहासिक तथ्यों का प्रस्तुतीकरण कल्पना के संयोग से उपन्यास–कला के आधार पर किया जाता है।
- ❖ ऐतिहासिक तथ्यों के प्रति उपन्यासकार की गहन आस्था या निष्ठा होती है।
- ❖ ऐतिहासिक उपन्यास में तथ्यों को रसमय बनाकर प्रस्तुत किया जाता है।
- ❖ ऐतिहासिक उपन्यास में कालक्रम पर विशेष बल दिया जाता है।
- ❖ ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास का प्रयोग दो प्रकार से होता है – प्रथम अवस्था में उपन्यासकार केवल इतिहास से सामग्री ग्रहण करता है, द्वितीय अवस्था में इतिहास से केवल सामग्री ही नहीं अपितु उपन्यास के लिए एक सुदृढ़ कथानक का भी चयन करता है फिर उसे अपनी सर्जना–शक्ति एवं अनूठी कल्पना–शक्ति के द्वारा सुगठित बनाकर उसमें प्राण–संचार करता है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि उपन्यास आधुनिक जीवन का गद्यात्मक महाकाव्य है, जिसमें जीवन की जटिलताओं, समस्याओं, संवेदनाओं और अन्तर्विरोधों का रेखांकन सामाजिक गतिविधियों, संरचनाओं और अवधारणाओं के अनुरूप होता जा रहा है। अतः इस साहित्यिक विधा में सामाजिक जीवन की एक समानान्तरता दिखाई पड़ती है। यह मानवीयता को स्वीकार कर, मनुष्य जीवन की ऊपरी और अतल गहराइयों का स्पर्श कर, किन्तु उससे भिन्न रूप धारण कर महत्वपूर्ण बन जाता है। उपन्यासकार की सृष्टि के नाते यह उपन्यासकार का पुनरुत्पादन कर उसे पुनर्परिभाषित करता है हालाँकि यह लेखक अलगावित होकर सामाजिक और सार्वकालिक बना जाता है।